Toppersnotes®
Unleash the topper in you

कृषि – पर्यवेक्षक

Agriculture Supervisor

राजस्थान कर्मचारी चयन बोर्ड, जयपुर

भाग – 4

शस्य विज्ञान

SIERRA INNOVATIONS

राजस्थान – कृषि पर्यवेक्षक

क्र.सं.	अध्याय	पृष्ठ सं.
	शस्य विज्ञान	
1.	शस्य विज्ञान	1
2.	आधुनिक कृषि का इतिहास	9
3.	मौसम विज्ञान	18
4.	मृदा विज्ञान	32
5.	मृदा उर्वरता एवं उत्पादकता	47
6.	राजस्थान की मृदाएँ एवं समस्याग्रस्त मृदाएँ	50
7.	पोषक तत्त्व, खाद एवं उर्वरक	55
8.	सिंचाई एवं सिंचाई स्त्रोत	71
9.	खरपतवार प्रबन्धन एवं नियंत्रण	80
10.	बीज उत्पादन, शुष्क खेती एवं फसल चक्र	90
11.	फसल उत्पादन • अनाज वाली फसलें • दाले • चारे वाली फसलें • रेशेदार फसलें • नकदी फसलें • मसाले वाली फसलें • तिलहनी फसलें	104

बीज उत्पादन, शुष्क खेती एवं फसल चक्र (Seed Production, Dry Farming and Crop Rotation)

बीज

दाना, फल, पत्ती, जड़ अथवा तने का वह भाग जो अपने समान रूप के स्वस्थ पौधे को जन्म देता हैं, बीज कहलाता हैं।

- तकनीकी दृष्टि से पुष्प के परिपक्व बीजाण्ड को ही बीज कहते हैं, जिसमें सूक्ष्म भ्रूण व भ्रूणपोष सुरक्षात्मक आवरण से ढका होता हैं।
- उन्नत कृषि में बीज का सर्वोपरि स्थान हैं। अभी हमारे देश के किसानों को लगभग 12% उन्नत बीज ही उपलब्ध हो रहा हैं।

उत्तम बीज के गुण

- वह किस्म जो स्थानीय किस्म के मुकाबले 10 से 15% अधिक उपज देती हो एवं विभिन्न प्रकार की जलवायु व मिट्टी के प्रति अनुकूल हो तथा निश्चित समय पर परिपक्व अवस्था में पहुँचती हो, उन्नत किस्म कहलाती हैं।
- बीज भरे हुए, चमकदार, समान आकार के होने चाहिए।
- बीज समान रंग के व समान वजन के होने चाहिए।
- बीज में आनुवांशिक शुद्धता 99 प्रतिशत व प्रजातीय शुद्धता 95% होनी चाहिए।
- अंकुरण प्रतिशत 80% से अधिक होनी चाहिए।
- बीज परिपक्व, स्वस्थ व ओजयुक्त होना चाहिए।
- बीज लम्बी जीवन क्षमता का होना चाहिए। बीज नया तथा कम आयु वाला होना चाहिए।
- बीजो की भंडार में सुरक्षित करते समय आर्द्रता या नमी निर्धारित मात्रा से अधिक नहीं होनी चाहिए। भंडारण के लिए बीज में नमी की औसत मात्रा औसतन 8-12% होनी चाहिए। 8-10% नमी होने पर बीजों को सीलबंद डिब्बों में पैक कर सकते हैं।
- अच्छे बीज का वास्तविक उपयोगिता मान (Real Value) 75 प्रतिशत से कम नहीं होना चाहिए। यह अच्छे बीज का महत्वपूर्ण गुण हैं।

मुख्य बिन्दु

- बीजों में अंकुरण 40 से 60 प्रतिशत नमी की अवस्था पर ही हो पाता हैं।
- बीज का भंडारण 5 प्रतिशत से कम नमी होने पर नहीं करना चाहिए।
- संकरण से विकसित किस्म का बीज प्रत्येक वर्ष बनाना पड़ता हैं।
- किसी भी बीज का मूल्यांकन उसके अंकुरण प्रतिशत से होता हैं।
- अंकुरण क्षमता का परीक्षण कागज के गीले तौलिये या बालू मिट्टी में करते हैं।
- शुद्ध बीज के नमूने में से प्रायः 100 बीजों को 2–4 बार पुनरावृत्तियाँ द्वारा अंकुरण ज्ञात करने पर ही सही अंकुरण प्रतिशत निकलता हैं।
- प्रत्येक बीज निश्चित समय पर ही अंकुरित होता हैं। इसके लिए अंकुरण पेटिका नामक उपकरण काम में लेते हैं। इस उपकरण में आवश्यतानुसार तापमान निर्धारित किया जा सकता हैं।
- तापमान बीजों के अंकुरण को प्रभावित करने वाला सबसे प्रमुख कारक हैं।
- अंकुरित बीजों को निम्न चार भागों में बाँटा जाता हैं –
  (1) सामान्य नवोद्भिद बीज
  (2) असामान्य नवोद्भिद बीज
  (3) कठोर बीज
  (4) मृत बीज

अंकुरण प्रतिशत – बीजों का अंकुरण प्रतिशत ज्ञात करने के लिए केवल सामान्य नवोद्भिद बीजों की ही गिनती करते हैं। बीजों का अंकुरण प्रतिशत ज्ञात करने का सूत्र निम्न है –

$$\text{अंकुरण प्रतिशत (G\%)} = \frac{\text{सामान्य नवोद्भिद बीज}}{\text{कुल बीज}} \times 100$$

या

$$\text{अंकुरण प्रतिशत (G\%)} = \frac{\text{कुल उगे बीजों की संख्या}}{\text{कुल बीजों की संख्या}} \times 100$$

उदाहरण –
यदि 1000 बीजों में से 30 प्रतिशत बीज कठोर या मृत हो तो अंकुरण प्रतिशत कितना होगा ?
उत्तर – 70 प्रतिशत

शुद्धता प्रतिशत – बीजों का शुद्धता प्रतिशत ज्ञात करने के लिए उसकी भौतिक शुद्धता का परीक्षण किया जाता हैं। बीजों का शुद्धता प्रतिशत ज्ञात करने का सूत्र निम्न है –

$$\text{शुद्धता प्रतिशत (p\%)} = \frac{\text{शुद्ध बीजों का भार}}{\text{कुल बीजों का भार}} \times 100$$

बीज का वास्तविक उपयोगिता मान (Real Value)

- बीजों का वास्तविक उपयोगिता मान ज्ञात करने के लिए पहले उसका शुद्धता प्रतिशत एवं अंकुरण निकाला जाता हैं। बीजों का वास्तविक उपयोगिता मान निम्न सूत्र से निकाला जाता है –

$$\text{वास्तविक उपयोगिता मान (RV)} = \frac{\text{शुद्धता प्रतिशत}}{\text{अंकुरित प्रतिशत}} \times 100$$

उदाहरण –
यदि किसी बीज का शुद्धता प्रतिशत 70 तथा अंकुरण प्रतिशत 90 हो तो उसका वास्तविक उपयोगिता मान कितना होगा ?
उत्तर – 63

बीजों का वर्गीकरण –

बीज पाँच प्रकार के होते हैं।

1. **मूल केन्द्रक बीज (Nucleous Seed) –**
   यह बीज स्वयं प्रजनक द्वारा उत्पादित किया गया सर्वप्रथम बीज होता हैं। मूल केन्द्रक बीज में आनुवांशिक शुद्धता 100 प्रतिशत होती हैं।
   - इसका उपयोग आधार बीज उत्पादन में किया जाता हैं।
   - इस प्रकार के बीजों की थैली पर किसी भी रंग का टैग नहीं लगा रहता हैं।
2. **प्रजनक बीज (Breeder's Seed) –**
   - वह बीज जिसका उत्पादन पादप प्रजनक के स्वयं के द्वारा अथवा अनुसंधान संस्था द्वारा प्रजनक की देख–रेख में किया गया हो प्रजनक बीज कहलाता हैं।
   - इसमें आनुवांशिक शुद्धता लगभग 100 प्रतिशत होती हैं।
   - इसकी थैलियों पर सुनहरे पीले (Golden Yellow) रंग का टैग लगा होता हैं।
3. **आधार बीज (Foundation Seed) –**
   - प्रजनक बीज द्वारा जो बीज तैयार किया जाता हैं, उसे आधार बीज कहते हैं।
   - यह बीज राष्ट्रीय बीज निगम (NSC), पंजीकृत निजी संस्थाओं या बीज प्रमाणिकरण संस्था द्वारा तैयार किया जाता हैं।
   - आधार बीज में आनुवांशिक शुद्धता 98 – 99.5 प्रतिशत तक होती हैं।
   - आधार बीज की थैलियों पर सफेद (White) रंग का टैग लगा होता हैं।
   - आधार बीज प्रमाणित बीज का स्रोत हैं।
4. **प्रमाणित बीज (Certified Seed) :-**
   - प्रमाणित बीज आधार बीज से तैयार किया जाता हैं।
   - इसका उत्पादन स्वयं प्रमाणीकरण संस्था द्वारा या उसकी देखरेख में किया जाता हैं।
   - यह बीज किसान को व्यापारिक फसल उत्पादन हेतु सर्वाधिक वितरित किया जाता हैं।
   - प्रमाणित बीज की थैलियों पर नीले रंग का टैग लगा होता हैं।
5. **पंजीकृत बीज (Registered Seed) -**
   - यह बीज सामान्यतः आधार बीज अथवा स्वयं पंजीकृत बीज से तैयार किया जाता हैं।
   - इस बीज में संतोषजनक आनुवांशिक पहचान एवं शुद्धता पाई जाती हैं।
   - भारत में सामान्यतः पंजीकृत बीज का उत्पादन नहीं किया जाता हैं तथा आधार बीज से सीधा सही प्रमाणित बीज तैयार किया जाता हैं।
   - पंजीकृत बीज की थैलियों पर बैंगनी (Purple) अथवा नारंगी (Orange) रंग का टैग लगा होता हैं।

बीजोत्पादन (Seed Production) –

- वह विज्ञान जिसके अंतर्गत उत्तम बीज उत्पादन का अध्ययन किया जाता हैं, उसे बीजोत्पादन तकनीकी विज्ञान (Seed Production Technology) कहते हैं।
- इस विज्ञान के अन्तर्गत बीज उत्पादन, बीज संसाधन, बीज संग्रहण, बीज परीक्षण, बीज प्रमाणीकरण एवं बीज वितरण का अध्ययन किया जाता हैं।
- बीजों का अंकुरण प्रतिशत ज्ञात करने के लिए अंकुरण पेटिका काम में लेते हैं।
- किसी भी फसल के उत्तम बीज प्रयोगशाला से किसानों तक निम्नलिखित चरणों में उत्पादित होकर पहुँचते हैं –

क्र.सं.	चरण	उत्पादक
1.	मूल केन्द्रक बीज	प्रजनक
2.	प्रजनक बीज	प्रजनक / संस्था
3.	आधार बीज	संस्था / बीज निगम
4.	प्रमाणित बीज	बीज निगम / पंजीकृत बीज उत्पादक

- बीज उत्पादन के इन चार चरणों में गुणवत्ता के उच्चतम स्तर को बनाये रखने के लिए न्यूनतम प्रमाणिकता मानक अनुमोदित किये गये हैं।

- प्रमुख फसलों के लिए बीजों के न्यूनतम प्रमाणीकरण मानक इस प्रकार हैं –

क्र.सं.	फसल	शुद्ध बीज (न्यूनतम %)
1.	गेहूँ, चना, जौ, बरसीम, मटर, बाजरा, ज्वार, मक्का, धान, कपास, मूंग, मोठ, उडद, चँवला, अरहर, ग्वार	98 प्रतिशत
2.	सरसों, तिल, सोयाबीन	97 प्रतिशत
3.	मूँगफली	96 प्रतिशत

- आर्द्रता प्रतिशत निम्न है –

क्र. सं.	फसल	आर्द्रता प्रतिशत
1.	गेहूँ, चना, जौ, बाजरा, ज्वार, मक्का, धान, सोयाबीन	12 प्रतिशत
2.	बरसीम, कपास, अरहर	10 प्रतिशत
3.	चना, मटर, मूंग, मोठ, उड़द, चँवला, तिल, मूँगफली, ज्वार	9 प्रतिशत
4.	सरसों	8 प्रतिशत

- प्रमुख फसलों में अंकुरण प्रतिशत निम्न है –

क्र. सं.	फसल	अंकुरण प्रतिशत
1.	गेहूँ, चना, जौ	85 प्रतिशत
2.	ज्वार, धान	80 प्रतिशत
3.	रिजका, तिल, बरसीम	80 प्रतिशत
4.	बाजरा, मूंग, मोठ	75 प्रतिशत
5.	उड़द, अरहर	75 प्रतिशत
6.	मूंगफली, सोयाबीन	70 प्रतिशत
7.	ग्वार, कुसुम, सूरजमुखी	70 प्रतिशत
8.	कपास	65 प्रतिशत

पृथक्करण दूरी (Minimum Isolation Distance)

- पर–परागण रक्षा हेतु फसल व किस्म विशेष की परागण प्रकृति के अनुसार अनुमोदित पृथक्करण दूरी पर बुवाई करनी चाहिए।
- बीज उत्पादन में पृथक्करण दूरी (Isolation distance) बहुत महत्त्वपूर्ण होती हैं।
- आनुवांशिक शुद्धता बनाये रखने के लिए फसल की किन्हीं दो किस्मों के मध्य एक निश्चित दूरी बनाये रखना आवश्यक हैं। यह दूरी पृथक्करण दूरी कहलाती हैं।

क्र. सं.		फसल	पृथक्करण दूरी (M)	
			आधार बीज	प्रमाणित बीज
1.	स्वपरागित फसलें (Self-pollinated)	गेहूँ, जौ, जई, धान, मूँगफली, सोयाबीन	3	3
		चना, उड़द, मूँग	10	5
		मटर	20	10
		सरसों	200	50
2.	परपरागित फसलें (Cross-Pollinated)	मक्का (संकुल व संकर)	400	200
		संकर बाजरा	1000	200
		मूली व शलजम	1600	1000
		सूरजमुखी / कुसुम	400	200
		गाजर	1000	800
		प्याज	1000	400
3.	प्रायः परपरागित फसलें (Often cross pollinated)	संकुल ज्वार	200	100
		संकर ज्वार	300	200
		कपास	50	30

बीच उपचार (Seed Treatment)

- पौधों में लगने वाले ज्यादातर रोग बीजजनित रोग होते हैं जो मुख्यतः फफूंद या फंगस द्वारा फैलते हैं।
- बीजजनित रोगों की रोकथाम के लिए बीजों को बुवाई से पूर्व फफूंदनाशी या कवकनाशी रसायन (Fungicide) से उपचारित करना चाहिए।
- बीजों का उपचारित करने के क्रम को FIR कहते हैं। जहाँ पर –
  F = Fungicide (फफूंदनाशी व कवकनाशी रसायन)
  I = Insecticide (कीटनाशी रसायन)
  R = Rhizobium (राइजोबियम जीवाणु कल्चर)
- फफूंद नाशक हेतु कार्बेन्डिज्म / वीटावेक्स (Systemic) एवं थाइरम (Contact) @ 2-3g/kg बीज।
- कीटनाशक हेतु क्लोरोपाइरीफॉस (दीमक के लिए) @ 4ml/kg बीज।
- कल्चर के रूप में नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिए राइजोबियम @ 1.5kg/ha (दाल वाली फसलों) एवं एजोटोबेक्टर (गेहूँ, जौ, धान, कपास, तिलहनी फसलें) व एजोस्पाइरीलम (मक्का, ज्वार, गन्ना, बाजरा)।

- फास्फोरस की घुलनशीलता के लिए PSB एवं अवशोषण व गमन के लिए VAM फफूंद काम में लेते हैं।

बीज नियम (Seed Act) –
संसद में 29/12/1966 में बिल पास या पारित हुआ तथा 2 अक्टूबर, 1969 में लागू हुआ।

बीज उत्पादन एजेन्सी (Seed Production Agency)

राष्ट्रीय बीज निगम (NSC) –
- यह संस्था 1963 में पंजीकृत हुई।
- इसके द्वारा विभिन्न फसलों के आधार बीजों का उत्पादन एवं वितरण होता हैं।

राजस्थान राज्य बीज निगम –
- इसकी स्थापना 1978 में हुई थी।

बीज की जीवन क्षमता परीक्षण (Seed Viability Tests) –

1. टेट्राजोलियम परीक्षण (Tetrazolium Test) –
- 2,3,5–टेट्राजोलियम क्लोराइड या ब्रोमाइड नामक रसायन के 1% घोल में बीजों को डुबोते हैं जिससे जीवित बीजों का रंग लाल या गुलाबी हो जाता हैं।
- इस परीक्षण को जैविक टेस्ट (Biological Test) भी कहते हैं।
- इसमें जीवित बीज का रंग लाल या गुलाबी (फॉरमेजन के कारण) हो जाता हैं।

2. पोटेशियम परमैंगनेट विधि ($KMnO_4$ Test) –
- यह बीजों की जीवन क्षमता (Viability) ज्ञात करने की गुणवत्ता युक्त विधि हैं।
- इस विधि में बीजों को $KMnO_4$ के घोल में डाला जाता हैं। जिससे घोल शोषित करने के बाद मृत बीजों का रंग बदल जाता हैं।

3. अन्य परीक्षण – ग्रोडेक्स परीक्षण, इंडिगो कर्माइन विधि।

प्रमाणित या उत्तम बीज की विशेषताएँ –
- आनुवांशिक शुद्धता एवं भौतिक शुद्धता 98 प्रतिशत से अधिक होनी चाहिए।
- संकर मक्का में सर्वाधिक अंकुरण (90%) तथा जौ, गेहूँ, सरसों एवं चना में न्यूनतम अंकुरण क्षमता (85%) होती हैं।
- धान, ज्वार व रिंजका में अंकुरण क्षमता 80% होती हैं।
- मूँगफली, सोयाबीन एवं ग्वार में अंकुरण क्षमता 70% होती हैं।
- कपास में न्यूनतम अंकुरण क्षमता केवल 65% प्रतिशत होती हैं।
- अधिकतम भण्डारण नमी प्रतिशत – गेहूँ व जौ में 12%, चावल 13%, दालवाली फसलों में 9% एवं तेल वाली फसलों में 8-9% होती है।

बीज सूचकांक (Seed Index) –
- 100 बीजों के भार को बीज सूचकांक या सीड इन्डेक्स कहते हैं।
- जिन फसलों के बीजों का आकार मोटा होता हैं उनमें परीक्षण भार (Test Weight) की जगह सीड इन्डेक्स (Seed Index) काम में लेते हैं। जैसे–चने का सीड इन्डेक्स (16-27g) होता हैं।

परीक्षण भार (Test Weight) –
- 1000 बीजों के भार को परीक्षण भार कहते हैं।
  जैसे – धान 25g, बासमती धान 21 g, गेहूँ 40g एवं केलेरिस माइनर 2g परीक्षण भार होता हैं।

बीज सुषुप्तावस्था (Seed Dormancy) –
- बीज की वह अवस्था जिसमें बीज के अन्दर एक पूर्ण वृक्ष के सम्पूर्ण गुण विद्यमान होते हैं परन्तु बुवाई के तुरन्त बाद यह बीज अंकुरित नहीं हो पाता हैं।
- बीजों में सुषुप्तावस्था आन्तरिक तथा बाहरी कारणों से होती हैं।
- जंगली जई में तीनों प्रकार की सुषुप्तावस्था पाई जाती हैं।

बीजो की सुषुप्तावस्था तोड़ना –

1. खुरचना (Scarification) –
- बीज की बाहरी परत को रासायनिक तथा यांत्रिक माध्यमों से बीज के आवरण को तोड़ना या खुरचते हैं जिससे बीजों का सख्त आवरण टूटने से पानी एवं गैसों का विनिमय होता हैं।
- साधारणतः इसके लिए एक प्रतिशत वाले गंधक के अम्ल (H_2SO_4) का इस्तेमाल करते हैं। इसके अलावा KNO_3 (1-3%) घोल बीज की बाहरी परत को तोड़ने के काम में लेते हैं।
- थायो यूरिया (1%) एवं GA के छिड़काव से आलू की सुषप्तावस्था को काम में लेते हैं।
- गर्म जल द्वारा 75 से 100^0C तक।
- सल्फ्यूरिक एसिड से कपास बीजों (1:10) को 20 मिनट तक उपचारित कर सख्त आवरण हटाते हैं।

2. चिलिंग तापमान से उपचारित करना/स्तरण (Stratification)

- तापमान द्वारा उपचारित करके बीजों के कठोर आवरण को तोड़ने की क्रिया को स्तरण कहते हैं।
- बीजों को कुछ समय तक शीत ग्रह में भण्डारित करने की क्रिया को शीत स्तरण कहते हैं।
- इस विधि में बीजों को बौने से पूर्व 2-8^{0}C तापमान पर 12 से 24 घण्टे तक रखते हैं।

3. भ्रूण परिवर्धन (Embryo Processing) –

- अपरिपक्व भ्रूण के संवर्धन या परिवर्धन हेतु एक विशेष प्रकार के रसायनों के मिश्रण के घोल का उपयोग किया जाता हैं। इसे टूकी घोल कहते हैं।

सीड प्लॉट तकनीक (Seed Plot Technique)

- पुष्करनाथ ने 1967 में देश के उत्तरी मैदानी भागों में वायरस रोग मुक्त आलु बीज उत्पादन हेतु विकसित की।

भौतिक शुद्धता (Physical Purity)

- इसका तात्पर्य बीजों का कंकड़ एवं टूटे हुई बीजों से मुक्त होना हैं।
- भौतिक अशुद्धता को डोकेज भी कहते हैं।
- प्रमाणित बीजों की भौतिक शुद्धता 98 प्रतिशत से अधिक होनी चाहिए।

आनुवांशिक शुद्धता (Genetic Purity)

- इसका तात्पर्य बीज दूसरी फसल एवं उसी फसल की अन्य किस्मों के बीजों से मुक्त होना हैं।
- मुख्य फसल से दूसरी फसल या उसी फसल की अन्य किस्मों के पौधों (Off type) को हटाना रोगिंग कहलाता हैं।
- आनुवांशिक शुद्धता के लिए ग्रो आउट परीक्षण करते हैं।
- प्रमाणित बीजों की आनुवांशिक शुद्धता 99 प्रतिशत से अधिक होनी चाहिए।

ऑर्थोडोक्स बीज :–

- ऐसे बीज जो कम तापमान एवं नमी पर लम्बे समय तक भंडारित करने पर भी जीवित रहते हैं।
  उदाहरण – अनाज एवं ढाल वाली फसलों के बीज।

रीकेल्सीट्रेन्ट बीज :–

- ऐसे बीज जो कम तापमान एवं नमी पर भण्डारित करने पर जीवित नहीं रहते हैं।
- उदाहरण – आम एवं नारियल बीज

बीज बोने की विधियाँ (Methods of Seed Sowing) –

- बीज बोने की पाँच निम्नलिखित विधियाँ हैं।
  1. छिडकवा विधि
  2. नाई विधि या देशी हल द्वारा
  3. कल्टीवेटर द्वारा
  4. डिबलर या प्लांटर द्वारा
  5. सीड ड्रिल द्वारा

महत्त्वपूर्ण बिंदु :–

- बीज बौने की सर्वोत्तम विधि सीड ड्रिल द्वारा बुवाई हैं।
- बीज की दूरी व गहराई निश्चित रखने के लिए सीड ड्रील काम में लेते हैं।
- उर्वरक एवं बीज दोनों एक साथ उपयोग हेतु सबसे प्रभावी विधि सीड ड्रिल हैं।
- धान की फसल में रोपाई हेतु डिबलर या प्लांटर का उपयोग करते हैं।
- राजस्थान में बुवाई की सबसे प्रचलित विधि छिड़काव विधि या नाई विधि हैं।
- सीड ड्रिल द्वारा बुवाई करने पर प्रति हैक्टेयर व्यय न्यूनतम आता हैं।

शुष्क भूमि कृषि (Dryland Agriculture)

- शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में जहाँ वाष्पीकरण की क्षमता वर्षा, ओस, बर्फ आदि से प्राप्त जल की मात्रा से अधिक हों, जहाँ सिंचाई की सुविधा उपलब्ध न हों, वहाँ संरक्षण व समुचित शस्य क्रियाओं द्वारा फसल उत्पादन करना शुष्क खेती कहलाता हैं।
- यह पूर्ण रूप से वर्षा पर आधारित खेती हैं।
- हमारे देश में 58 प्रतिशत क्षेत्र वर्षा पर आधारित हैं तथा कुल खाद्यान्न का 44% इसी क्षेत्र में आता हैं।
- राजस्थान में 65 प्रतिशत क्षेत्र भाग वर्षा पर आधारित (बारानी) हैं।
- भारत में मानसून काल मात्र 40 से 80 दिन रहता हैं।
- सर्वप्रथम शुष्क खेती की परिभाषा व परिकल्पना डॉ. जॉन ए. विडसोई (1863) ने दी थी।
- भारत में शुद्ध बोये गये क्षेत्र (142 mha) का 67 प्रतिशत क्षेत्र शुष्क कृषि के अन्तर्गत आता हैं।
- राजस्थान में मुख्यमंत्री जलस्वालम्बन योजना की शुरूआत 22 दिसम्बर 2015 से हुई।

शुष्क कृषि के प्रकार –

वर्षा की मात्रा के आधार पर ड्राईलैण्ड कृषि को तीन भागों में विभाजित किया गया हैं –

1. सूखी खेती (Dry Farming)

- इस प्रकार की खेती 750 मिलीमीटर से कम वर्षा वाले शुष्क क्षेत्रों में की जाती हैं।
- फसल बुवाई के लिये उपयुक्त वृद्धि काल 75 दिनों से कम होता हैं।

2. शुष्क भूमि खेती (Dry land Farming) –

- इस प्रकार की खेती 750 - 1150 मिलीमीटर वर्षा वाले अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में की जाती हैं।
- फसल बुवाई के लिये उपयुक्त वृद्धि काल 75 - 120 दिनों के मध्य आता हैं।

3. रेन फेड फार्मिंग/वर्षा पोषित खेती (Rainfed Farming)

- ऐसे क्षेत्र जहाँ वार्षिक औसत वर्षा 1150 mm से अधिक होती हैं वहाँ फसलों की खेती करना।
- फसल बुवाई के लिये उपयुक्त वृद्धि काल 120 दिनों से अधिक होता हैं।

सूखा (Drought)

- जहाँ वार्षिक वर्षा 75 प्रतिशत से कम होती हैं। सामान्यतः ऐसे क्षेत्र सूखा के अन्तर्गत आते हैं।
- भयंकर सूखा (Severe drought) – सामान्य से 50 प्रतिशत कम वर्षा होती हैं।

असिंचित (बारानी) खेती

- असिंचित खेती से तात्पर्य बिना सिंचाई के फसलोत्पादन से हैं। यह प्रायः आर्द्र जलवायु क्षेत्रों में की जाती हैं।
- इन क्षेत्रों में वर्षा अधिक व वाष्पीकरण कम होता हैं।
- राजस्थान में कृषि योग्य भूमि का लगभग 75% भाग वर्षा पर आधारित (बारानी) हैं।

शुष्क खेती व बारानी खेती में अन्तर

क्र.सं.	तत्व	शुष्क खेती	बारानी खेती
1.	वर्षा की मात्रा	< 800 मिमी	> 800 मिमी
2.	आर्द्रता	< 200 दिन	> 200 दिन
3.	पकने की अवधि	< 200 दिन	> 200 दिन
4.	क्षेत्र	शुष्क व अर्द्धशुष्क	अर्द्धशुष्क व सिंचित

शुष्क खेती के सिद्धांत –

1. नमी का संरक्षण –

- गहरी जुताई करके
- पलवार (Mulch) का उपयोग करना।
- वर्षा जल भंडारित (Watershed) का प्रयोग करना
- खरपतवार नियंत्रण
- वायुरोधी पट्टियों (Wind breaks/shelters belts) का प्रयोग
- वाष्पोत्सर्जन की मात्रा कम करके –

वाष्पोत्सर्जन अवरोधकों का प्रयोग (Use of Anti-transpirants)

- ये वे पदार्थ होते हैं जो पौधों में उत्सर्जन की मात्रा कम करके पौधे में नमी संरक्षण का काम करते हैं।
- ये मुख्यतः चार प्रकार के होते हैं।

(i) रन्ध्र बंद करने वाले (Stomata Closing Type) –

- ये पदार्थ पौधे की पत्तियों के रन्ध्रों को बंद करके जल की हानि कम करते हैं।

जैसे – PMA@10^{-4} (फफूंदनाशी), एट्राजीन (खरपतवारनाशी), CO_2, ABA इत्यादि।

(ii) परावर्तित प्रकार (Reflecting Type) –

- सूर्य से आने वाली किरणों को परावर्तित करके पत्तियों का तापमान कम करते हैं जिससे पौधे में वाष्पोत्सर्जन क्रिया द्वारा जल हानि कम होती हैं।

जैसे – केओलीन (Kaoline) @ 5% पदार्थ का छिड़काव

(iii) पत्ती पर आवरण बनाना (Film forming) –

- ये पदार्थ पत्तियों की सतह पर एक पतला आवरण बनाते हैं जिससे वाष्पोत्सर्जन क्रिया कम हो पाती हैं। जैसे–माबिलीक, हेक्जाडेकेनॉल, सिलिकॉन, ऑयल एवं मोम युक्त पदार्थ।

(iv) वृद्धि अवरोधक (Growth retardants) –

- ये पदार्थ जड़ की अपेक्षा तने की वृद्धि कम करते हैं जिससे पौधों को कम जल की आवश्यकता होती हैं।

जैसे – साइकोसेल (Cycocel)

2. फसल प्रबंधन (Crop management)

- मिश्रित खेती (Mixed cropping) उगाना – यह शुष्क खेती के लिए फसल बीमा हैं।
- शुष्क खेती में बीज दर 10 से 15 प्रतिशत अधिक रखते हैं तथा पौधों की संख्या 10-15% कम रखते हैं।
- बुवाई पूर्व – पश्चिम दिशा में करनी चाहिए।
- किस्म चुनाव (Selection of tolerant varieties)

शुष्क खेती के लिए फसलों की प्रमुख किस्में

क्र. सं.	फसल	किस्में	परिपक्वन अवधि
1.	बाजरा	एम.एच.–179, एच. एच. बी–67, डब्ल्यू. सी. सी. – 75, आर. एच. बी. – 90	85 - 90 दिन
2.	ज्वार	CSH-14, SPV-96, CSH-6	80 - 90 दिन
3.	मक्का	संकुल अगेटी–76, डी–765	90 – 100 दिन 85 – 90 दिन
4.	तिल	RT-125, RT-46, TS-25	75 - 80 दिन 90 – 100 दिन
5.	जौ	RD-31, 2552	115 दिन
6.	चना	दोहद यलो, RSG-2, BJ256, C-235	90 से 105 दिन 85 - 90 दिन
7.	गेहूँ	D-134, मुक्ता, K-65, लोक–1, जोब–666, राज. 3077	115 - 120 दिन
8.	सोयाबीन	JS -335, NRC-37	90 – 95 दिन
9.	मूँगफली	JL-24, GG-2, AK-12-24	90 – 95 दिन
10.	सरसों	RH – 30, पूसा जय किसान (बायो–902), पूसा बोल्ड, दुर्गामणी, अरावली	130 - 135 दिन
11.	ग्वार	दुर्गापुरा सफेद, दुर्गापुरा जय, RGC-936	100 - 115 दिन
12.	मूंग	पूसा बैशाखी, K-851, SM1-668, RMG-62	60 - 80 दिन
13.	मोठ	जड़िया, ज्वाला, RMO-40, IPCMO-880	62 - 65 दिन 90 - 100 दिन
14.	अरहर	प्रभात, IT-21, शारदा, मुक्ता	115 – 120 दिन 140 - 180 दिन
15.	चंवला	C-152, FS-68	65 – 700 दिन
16.	धान	जया, बाला, किरण, कंचन, रत्ना	–
17.	सूरजमुखी	सनराइज	–
18.	कपास	प्रभात, महालक्ष्मी, वरहा लक्ष्मी, हैम्पी, H-4	–
19.	उड़द	T-9, कृष्णा, बरखा	–

टिकाऊ खेती (Sustainable Agriculture) –

- इसे प्राकृतिक या पारिस्थितिक खेती भी कहते हैं। इस प्रकार की खेती में कम लागत वाले साधनों के साथ सीमित मात्रा में रसायनों का उपयोग किया जाता हैं।

कार्बनिक खेती (Organic farming) –

- इस खेती में कृत्रिम रसायनों के स्थान पर कार्बनिक खादों, जैव उर्वरकों, जैविक कीटनाशक, जैविक फफूंदनाशी का प्रयोग किया जाता हैं।
  नोट – भारत में हाल ही सिक्किम को पूर्ण कार्बनिक राज्य घोषित किया हैं।
- भारत का प्रथम कार्बनिक राज्य उत्तराखण्ड हैं।

फसल चक्र (Crop Rotation)

- किसी निश्चित भूमि या क्षेत्र में निश्चित अवधि में फसलों को इस प्रकार हेर–फेर कर बौना जिससे फसलों की अधिकतम पैदावार प्राप्त हो सकें और भूमि की उर्वरा शक्ति नष्ट न हो, फसल चक्र कहलाता हैं।

सिद्धान्त –

- उथली जड़ों के बाद गहरी जड़ों वाली फसलें उगानी चाहिए।
- अधिक पोषक तत्व चाहने वाली फसलों के बाद कम पोषक तत्व चाहने वाली फसलें उगानी चाहिए।
- अधिक पानी चाहने वाली फसल के बाद कम पानी चाहने वाली फसल उगानी चाहिए।
- फसल चक्र में लगातार एक ही कुल की फसलें नहीं उगानी चाहिए।
- फलीदार फसलों के बाद बिना फलीदार फसलें उगानी चाहिए क्योंकि फलीदार फसलों की जड़ों में गांठों में उपस्थित राइजोबियम जीवाणु वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करते हैं।
- फसल चक्र ऐसा हो कि कृषक के पास उपलब्ध साधनों का भरपूर उपयोग हो सके।
- फसल चक्र में बाजार मांग को ध्यान में रखकर फसलें सम्मिलित करनी चाहिए।
- मृदा क्षरण को प्रोत्साहन देने वाली फसलों के बाद मृदा क्षरण अवरोधक फसलें उगानी चाहिए।

फसल चक्र के लाभ –

- खेत की उर्वरा शक्ति बढ़ती हैं।
- मृदा की भौतिक दशा में सुधार होता हैं।
- खरपतवारों, रोगों व कीटों का नियंत्रण होता हैं।

- फसलों की पैदावार बढ़ जाती हैं।
- भूमि कटाव की रोकथाम होती हैं तथा मृदा विकार में कमी आती हैं।
- फसल उत्पादों की गुणवत्ता में वृद्धि होती हैं।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु –

- फसल चक्र एक से लेकर चार वर्षो तक का हो सकता हैं।
- फसल चक्र का मुख्य उद्देश्य भूमि की उर्वरा शक्ति के नुकसान को रोकना हैं।
- फसल चक्र किसान की घरेलू आवश्यकताओं एवं किसान के पास उपलब्ध साधनों से पूरे–पूरे उपयोग को ध्यान में रखकर बनाना चाहिए।

विभिन्न फसलों द्वारा मृदा में नाइट्रोजन स्थिरीकरण

क्र. सं.	नाम	नाइट्रोजन (कि.ग्रा./हैं.)
1.	उड़द	42.9
2.	चंवला	56.3
3.	मटर	66.5
4.	मूंग	38.6
5.	सनई	89.7
6.	ग्वार	62.4

राजस्थान की जलवायु अनुसार फसल चक्र –

एक वर्षीय फसल चक्र –

- बाजरा – जीरा
- तिल/मोठ/बाजरा/मक्का–गेहूँ – मक्का–मसूर
- अरहर – गेहूँ
- मक्का – चना
- मूँगफली – गेहूँ/चना/जौ
- मक्का – मसूर
- सोयाबीन – गेहूँ
- धान/ज्वार/मक्का–गेहूँ

द्विवर्षीय फसल चक्र –

- ग्वार–गेहूँ–बाजरा–चना
- मक्का–गेहूँ–उड़द–सरसों
- कपास–गेहूँ–ग्वार–गेहूँ/सरसों

त्रिवर्षीय फसल चक्र –

- मक्का – गन्ना – धान – गेहूँ
- कपास – मेथी – गन्ना – धान

राजस्थान में बारानी खेती हेतु फसल चक्र –

- बाजरा – चना
- मक्का – सरसों
- ज्वार – चना
- ज्वार – सरसों

राजस्थान में सिंचित खेती हेतु फसल चक्र

- मूँगफली – गेहूँ
- धान – गेहूँ/जौ
- मक्का – गेहूँ/जौ

मिश्रित फसल (Mixed Cropping)

- एक ही खेत में एक साथ दो या दो से अधिक फसलों को उगाना 'मिश्रित फसल' कहलाता हैं।
- मिश्रित फसल असिंचित क्षेत्रों में ज्यादा प्रचलित हैं।
- मिश्रित फसल अपनाना एक तरह से फसल के नुकसान के विरूद्ध एक प्रकार का बीमा हैं।
- मिश्रित फसलों के लिए शस्य मिश्रण निम्न प्रकार से किया जाता हैं –

(i) मिश्रित फसलें (Mixed Crops) – इस शस्य मिश्रण में फसलों की बुवाई व कटाई का समय एक सा रहता हैं।
उदाहरण – चना + सरसों, गेहूँ + चना, मक्का + सोयाबीन।

(ii) सहचर फसलें (Companion Crops) –

- इस शस्य मिश्रण में विभिन्न फसलों के बीजों को एक साथ मिलते नहीं बल्कि अलग–अलग फसलों के बीजों को अलग–अलग पंक्तियों में बुवाई कर देते हैं।
  उदाहरण – अरहर की दो पंक्तियों के बीच ग्वार की दो पंक्तियाँ।

(iii) रक्षक फसलें (Guard Crops) –

- इसमें मुख्य फसल को खेत के मध्य में बो देते हैं।
  उदाहरण – गन्ने के खेत के चारों ओर सनई की फसल की कुछ पंक्तियों को बौना।

(iv) सहायक अथवा वृद्धि कारक फसलें (Augmenting Crops) –

- इस मिश्रण में मुख्य फसल की उपज बढ़ाने के लिए अन्य गौण फसलें उसमें मिला दी जाती हैं।
  उदाहरण – बरसीम के साथ सरसों की बुवाई करना।

मिश्रित शस्य के सिद्धान्त –

- इसके लिए ऐसी फसलों का चुनाव करना चाहिए जो फसलें उस क्षेत्र की जलवायु व भूमि के उपयुक्त हों।

- खाद्यान्न वाली फसलों के साथ दलहनी या फलीदार फसलें मिश्रित करनी चाहिए।
- अलग–अलग ऊँचाई वाली फसलें लेनी चाहिए ताकि सूर्य के प्रकाश के लिए प्रतियोगिता न हो।
- विभिन्न गहराई वाली जड़ों की फसलें सम्मिलित करनी चाहिए।

मिश्रित शस्य के लाभ :–

- फसलों के नुकसान के विरूद्ध एक प्रकार का बीमा हैं।
- भूमि की बचत होती हैं।
- मौसम की प्रतिकूल दशाओं में उपज स्थिर रहती हैं।
- भूमि में पोषक तत्वों व नमी का अवशोषण संतुलित होता हैं।
- खरपतवार व रोगों पर नियंत्रण होता हैं।

मिश्रित शस्य के उदाहरण :–

1. धान्य + फलीदार मिश्रित शस्य
   बाजरा + मूंग, बाजरा + चँवला
   मक्का + उड़द, मक्का + सोयाबीन
   ज्वार + चँवला
   ज्वार + अरहर, जौ + चना
2. धान्य + बिना फलीदार मिश्रित शस्य
   गेहूँ + जौ, गेहूँ + सरसों, गेहूँ + अलसी
3. फलीदार + फलीदार मिश्रित शस्य
   अरहर + मूंग,
   अरहर + उड़द,
   मोठ + तिल

शस्य प्रकार –

- **अन्तरा शस्य :–** एक ही खेत में एक ही समय में अलग–अलग कतारों में दो या दो से अधिक फसलों को उगाना।
- **मिश्रित शस्य :–** दो या दो से अधिक फसलों के बीजों को मिलाकर एक ही खेत में एक ही समय उगाना मिश्रित शस्य कहलाता हैं।
- **एकल शस्य :–** एक वर्ष में केवल एक ही फसल उगाना एकल शस्य कहलाता हैं।
- **द्विशस्य :–** एक ही खेत में एक ही वर्ष में लगातार दो फसलें उगाना द्विशस्य कहलाता हैं।
- **बहुशस्य :–** एक ही खेत में एक ही वर्ष में लगातार तीन या इससे अधिक फसलें उगाना बहुशस्य कहलाता हैं।
- **क्रमागत शस्त्र :–** बिना खेत खाली छोड़े तुरन्त एक के बाद एक फसल त्वरित गति से उगाना क्रमागत शस्य कहलाता हैं।
- **रिले क्रोपिंग :–** फसल की कटाई से कुछ सप्ताह पूर्व ही दूसरी फसल की बुवाई कर देना आवतरण शस्य कहलाता हैं।
- **बहुमंजिली शस्य :–** एक ही खेत में एक ही समय अलग–अलग ऊँचाई की उगाई गई फसलों को बहुमंजिली शस्य कहते हैं।

भू–परिष्करण (Tillage)

- फसल उगाने हेतु मृदा में उचित स्थिति बनाने के लिए बुवाई पूर्व से लेकर कटाई पश्चात् तक की यान्त्रिक क्रियाओं को भू–परिष्करण कहते हैं।

भू–परिष्करण के उद्देश्य –

- खरपतवार नियंत्रण,
- नमी का संरक्षण,
- हानिकारक कीटों व व्याधियों युक्त अवशेषों को नष्ट करना।

भू – परिष्करण का मृदा पर प्रभाव –

- मृदा रन्ध्रता (जल व वायु रन्ध्र) में वृद्धि
- स्थूल घनत्व (B.D.) में कमी।

पंकीलीकरण (Puddling) –

- भूमि पर भरे पानी (5-10 cm) में मृदा की बुआई जुताई करना।
- पंकीलीकरण के उपरान्त मृदा में दो क्षेत्र बनते हैं।
- ऑक्सीकृत क्षेत्र (Oxidized zone) – ऑक्सीजन युक्त व 1- 10 MM (1cm) गहरी परत।
- अपचयित क्षेत्र (Reduced Zone) – ऑक्सीजन रहित क्षेत्र।

पंकीलीकरण के उद्देश्य –

- पानी की सतह से नीचे अपारगम्य परत का निर्माण जो पानी को नीचे जाने से रोकता हैं।
- खरपतवार नियंत्रण करना।
- धान के लिए उपयुक्त क्यारी का निर्माण।

भू–परिष्करण के प्रकार –

1. **सघन भू–परिष्करण**
   - भूमि की बार–बार जुताई करना जिससे भूमि की सतह पर 15% से कम क्षेत्र में पादप अवशेष शेष रहे।

- लाभ – मृदा कठोरपन में कमी, कीट व खरतपतवार नष्ट होना।
- हानियाँ – अधिक मृदा अपरदन व महंगी प्रक्रिया।

सघन भूपरिष्करण के प्रकार –

प्राथमिक भू–परिष्करण (Primary Tillage)

- बुवाई से पूर्व की गई सभी यांत्रिक क्रियाओं को प्रारम्भिक भू–परिष्करण कहते हैं।
  उदाहरण – पाटा लगाना, जुताई करना, सीड बैक तैयार करना, पॉवर टिलर, भूमि में आकार में जुताई करना।
- सब सॉयलिंग – भूमि को बिना पलटते हुए अधोसतह (60 से 70 सेमी. नीचे) में उपस्थित कठोर परत को चिजेल हल के माध्यम से तोड़ना।

द्वितीयक भू–परिष्करण (Secondary tillage) :-

- बुवाई के पश्चात् से लेकर कटाई पश्चात् तक के सभी कार्य द्वितीय भू–परिष्करण कहलाते हैं।
  उदाहरण – निराई–गुड़ाई, दवा छिड़कना, औसाई करना, फसलों पर मिट्टी चढ़ाना।

संरक्षित भू–परिष्करण (Conservative Tillage) :-

- भूमि पर कम से कम जुताई करना ताकि भूमि सतह पर 30% से अधिक क्षेत्र में पादप अवशेष (Plant residues) शेष रहे।
- लाभ – मृदा का कम अपरदन, सस्ती प्रक्रिया।
- हानियाँ – कीट व्याधियों एवं खरपरवारों का अधिक प्रकोप।
  उदाहरण – जीरो टिलेज, मल्च टिलेज।

जीरो टिलेज (Zero Tillage) –

- प्राथमिक जुताई कार्य नहीं करके सीधे ही फसल की बुआई करना।
- जीरो टिलेज में खरपतवार नियंत्रण पेराक्वॉट, डाईक्वॉट एवं ग्लाईकोसेट द्वारा किया जाता हैं। अतः इन्हें जीरो टिलेज खरपतवारनाशी भी कहते हैं।
  - गहरी जुताई – 25 से 30 सेमी. गहराई
  - मध्य जुताई – 15 से 20 सेमी. गहराई
  - हल्की जुताई – 5 से 6 सेमी. गहराई
- मशीनों की शक्ति अश्वशक्ति (Horse Power) में नापी जाती हैं।
- 1 अश्वशक्ति (Hp) = 746 वॉट्स
- 1 मानव शक्ति = 0.1 अश्वशक्ति (Hp)
- डिस्क हल व डिस्क हेरो का डिस्क कोण 40-45 (42.5) डिग्री।
- डिस्क हल व डिस्क हेरो का टिल्ट कोण (Tilt angle) – 15 – 25 डिग्री।
- Share फाल – हलों का वह भाग जो भूमि के सम्पर्क में आकर उसे खोदता हैं एवं उलटता हैं।
- एक कार्य दिवस में देशी हल द्वारा 0.1 से 0.15 हेक्टेयर भूमि की जुताई की जा सकती हैं।
- फर्टीकम सीड़ड्रील – बीज व उर्वरक दोनों की साथ बुआई करना।

फसल पद्धति से सम्बन्धित शब्दावली

फसल पद्धति (Cropping Pattern) –

- किसी निश्चित क्षेत्र में निश्चित समय में बोयी गई विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल का अनुपात।
- फसलों के वार्षिक क्रम व स्थान के प्रबन्धन तथा खाली क्षेत्र।

फसल प्रणाली (Cropping system) –

- फसल पद्धति का फार्म पर उपलब्ध संसाधनों एवं तकनीकी के साथ सम्बन्ध।
- भारत की मुख्य फसल प्रणाली – धान–गेहूँ

मोनो कल्चर –

- किसी स्थान पर लगातार एक ही फसल उगाना।
  जैसे – धान–धान–धान।

एकल फसल (Mono Cropping) –

- एक निश्चित खेत में एक वर्ष में केवल एक फसल उगाना।

बहु फसलें (Multi Cropping) –

- एक निश्चित खेत में दो या दो से अधिक फसलें बोना बहु फसलों का उदाहरण हैं।
  ये दो प्रकार की होती हैं।
  (a) मिश्रित फसल (Mixed Cropping) – बिना निर्धारित पंक्ति के बीजों को मिलाकर दो या दो से अधिक फसलें एक साथ उगाना मिश्रित फसल कहलाती हैं।
  (b) अन्तरा फसलें (Intra Cropping) – एक ही खेत में एक निश्चित पंक्ति (Define Row) या एक समान पैटर्न पर दो या दो से अधिक फसलें एक साथ उगाना अन्तरा फसलें कहलाती हैं।
  जैसे – गेहूँ + सरसों (9:1) चना + सरसों (4:1 or 6:1)

बहुमंजिला खेती (Multi Storey Cropping) –

- अलग–अलग ऊँचाई की फसलों को एक साथ बोना। जैसे – चाय के बगीचों, छायादार वृक्ष

फसल चक्र (Crop Rotation) –

- मृदा की उर्वरता (नाइट्रोजन वृद्धि) बनाये रखने के लिए फसलों को क्रमबद्ध बोना।
- अनाज वाली फसलों के बाद दाल वाली फसलें बोनी चाहिए।

आवतरण या अविराम फसलें (Relay Cropping) –

- पहली फसल को काटने से पूर्व दूसरी फसल लगाना या बौना, आवतरण फसलें कहलाती हैं।
  जैसे – धान की कटाई से पूर्व मसूर, अलसी बौना।
- पेरा (Paira) – पश्चिम बंगाल व बिहार में रिले क्रॉपिंग का प्रकार।
- उत्तेरा (Utera) – मध्यप्रदेश में रिले क्रॉपिंग का प्रकार।

गली फसलें (Alley cropping) –

- भूमि की उर्वरा शक्ति व उत्पादन शक्ति को बढ़ाने हेतु बड़े पेड़ों की पंक्तियों के बीच में फसलें उगाना गली फसलों का उदाहरण हैं।
  जैसे – हल्दी, अदरक, उड़द, शक्करकंद आदि को सफेदा व बबूल के बीच में लगाना।

ले फसलें (Ley-Farming) –

- कृषित फसलों के फसल चक्र में दो वर्ष या उससे अधिक समय तक चारागाहा रखवाना, ले फार्मिंग कहलाता हैं।

एरेबल फसलें (Arable Crops) –

- ऐसी फसलें जिनके लिए जुताई (Tillage) क्रियायें करना आवश्यक हैं उन्हें एरेबल फसलें कहते हैं।
  जैसे – आलू, तम्बाकू, धान, गन्ना, मक्का।

सहायक फसलें (Augmenting Crops) –

- ये फसलें मुख्य फसलों से पहले या त्वरित बढ़ने के लिए लगाई जाती हैं।
  जैसे – बरसीम व रिंजका में सरसों लगाना जिससे पहली कटाई में अधिक उपज प्राप्त हो सकें।

पेडी (Ratooning) –

- पहली वाली फसल को काटने के बाद उसी तने से दूसरी फसल लेना रेटुनिंग कहलाता हैं।
- यह क्रिया गन्ने एवं घासों में करते हैं।

नगदी फसलें (Cash Crops) –

- आलू, गन्ना, कपास, आदि फसलों को नगदी फसलें कहते हैं क्योंकि इन फसलों से प्रति इकाई क्षेत्रफल से अधिक मूल्य प्राप्त होता हैं।

केच फसल (Catch Crops) –

- जब मुख्य फसल उगाना सम्भव नहीं हों तब छोटी अवधि व जल्दी पकने वाली फसलें बौना।
  जैसे – मूंग, उड़द, प्याज, चंवला।

पलवार (Mulch) या कवर फसलें –

- ये फसलें भूमि को ढ़क कर रखती हैं जो मृदा नमी संरक्षण करने व मृदा क्षरण से बचाने के लिए उगाई जाती हैं।
  जैसे – मूंग, उड़द, लोबिया, शकरकंद।

फांस फसलें (Trap crops) –

- ये फसलें मुख्यतः फसल की बाउण्ड्री पर लगाई जाती हैं। जो कि कीटों व बीमारियों को अंदर की फसल तक नहीं जाने देती हैं।
  जैसे – पत्ता गोभी के साथ सरसों तथा टमाटर व भिण्डी।

जीवन निर्वाह खेती (Subsistence Farming) –

- खेती से प्राप्त उत्पादन जो केवल पारिवारिक आवश्यकताओं को पूर्ण करता हैं।

सघन खेती (Intensive Farming) –

- प्रति इकाई भूमि पर अधिक मात्रा में खाद पानी देकर या तकनीकी का उपयोग कर अधिक उत्पादन लेना।

टिकाऊ खेती (Sustainable Agriculture) –

- इस प्रकार की कृषि में कम लागत वाले आदानों का प्रयोग किया जाता हैं एवं रासायनिक उर्वरक, पीड़ानाशियों का प्रयोग सीमित किया जाता हैं।
- इससे भूमि की उर्वरता क्षमता काफी समय तक बनी रहती हैं।
- इसे प्राकृतिक खेती, पारिस्थितिकी खेती भी कहते हैं।

कार्बनिक खेती (Organic farming) –

- संश्लेषित रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, फफूंदनाशकों, खरपतवार नाशकों का प्रयोग नहीं करते हैं। इनके स्थान पर कार्बनिक खादों, जैव उर्वरकों, ट्राइकोग्रामा (जैविक कीटनाशक), ट्राइकोड्रमा (जैविक फफूंदनाशक), कोलेगो व डिवाइन का प्रयोग करना चाहिए।
- भारत का पहला कार्बनिक राज्य उत्तराखण्ड।

- भारत सरकार द्वारा सिक्किम को पूर्ण कार्बनिक राज्य घोषित किया हैं।
- रासायनिक खेती से कार्बनिक खेती प्रमाणीकरण में उसे 4 वर्ष का समय लगता हैं।
- IFOAM, - 1972 – कार्बनिक खेती पर नियंत्रण करने वाली संस्था है।

झूम खेती/शिफ्टिंग खेती –

- वनों को काट कर एवं जलाकर एक ही फसल (धान) दो–तीन साल तक उगाना।
- यह खेती भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में की जाती हैं।

टोंग्या खेती –

- वन रोपण के बाद, (जब तक पेड़ बडे नहीं होते) की जाने वाली खेती।

दियारा खेती –

- नदी के किनारों पर बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में बाढ़ हट जाने के बाद की जाने वाली खेती।

समोच्चय खेती –

- पहाड़ी क्षेत्रों में ढ़लान के विपरीत दिशा में की जाने वाली खेती।

आपातकालीन खेती (Contingent Cropping)

- बारानी क्षेत्रों में लघु अवधि की फसलें उगाना जो उस क्षेत्र के लिए लाभदायक होती हैं।

उनालू –

- वे फसलें जिनकी अक्टूबर में बुआई कर मार्च–अप्रेल में काटते हैं।
  जैसे – रबी फसलें – गेहूँ, जौ, सरसों, चना आदि।

स्यालू/सावनी –

- वे फसलें जिनकी जून–जुलाई में बुआई कर सितम्बर–अक्टूबर में काट ली जाती हैं।

फसल सघनता (Cropping Intensity) –

$$\text{फसल सघनता} = \frac{\text{कुल फसली क्षेत्र}}{\text{शुद्ध बोया गया क्षेत्र}} \times 100$$

- राजस्थान में फसल सघनता 128- 130% हैं।
- भारत में फसल सघनता 138% हैं।

फसल चक्र सघनता (Crop Rotational Intensity) –

- फसल चक्र सघनता में हरी खाद वाली फसलों को गणना में सम्मिलित नहीं करते हैं।
- इन्टर व मिक्सड क्रॉपिंग में बोई गई सभी फसलों की गणना एक ही फसल के रूप में करते हैं।

$$\text{फसल चक्र सघनता} = \frac{\text{फसल चक्र में फसलों की संख्या}}{\text{वर्षों की संख्या}} \times 100$$

जैसे – धान–गेहूँ–मूँग = 300%
चरी – बाजरा = 200%
बाजरा – चना – परती – गेहूँ = 150%
हरी खाद – आलू – गन्ना – पेड़ी = 100%
मूंगफली – गेहूँ – गन्ना = 100%
चना + सरसों – जायद मूँग – मक्का + मूँग = 300%

पादप वृद्धि एवं पादप हार्मोन्स

- पौधों की वृद्धि व समय को सिगमाइड चक्र के द्वारा दर्शाया जाता हैं।
- पत्ती क्षेत्र सूचकांक (Leaf Area Index/LAI) – वाट्सन द्वारा प्रतिपादित किया गया।

$$\text{पत्ती क्षेत्र सूचकांक} = \frac{\text{पादप पत्तियों का कुल क्षेत्र फल}}{\text{पादप द्वारा घेरा गया क्षेत्र}}$$

- कटाई सूचकांक (Harvesting Index) डोनाल्ड द्वारा प्रतिपादित।

$$\text{कटाई सूचकांक} = \frac{\text{दाना या आर्थिक उपज}}{\text{दाना + चारा या जैविक उपज}}$$

प्रकाश दीप्तकालिता (Photo periodism) –

- पौधों की पुष्पन क्रिया पर सूर्य के प्रकाश अवधि का प्रभाव

1. **अल्प या लघु दीप्तकाल पौधे –**
   - इनमें पुष्पन क्रिया हेतु छोटे दिनों (प्रकाश अवधि 10 घंटे से कम) एवं लम्बी रातों की आवश्यकता होती हैं।
     उदाहरण – खरीफ फसलें बाजरा, मक्का, धान, गन्ना आदि।
2. **दीर्घ दीप्तकाल पौधे (Long day Plant) –**
   - इनमें पुष्पन क्रिया हेतु लम्बे दिनों (प्रकाश अवधि 14 घंटे से अधिक) एवं छोटी रातों की आवश्यकता होती हैं।
     उदाहरण – रबी फसलें गेहूँ, जौ, चना आदि।
3. **दिवस निष्प्रभावी पौधे (Day natural plant) –**
   - इनमें पुष्पन की क्रिया हेतु निश्चित प्रकाश अवधि की आवश्यकता नहीं होती एवं ये पौधे सभी ऋतुओं में उगाये जा सकते हैं।
     उदाहरण – सूरजमुखी, कपास, टमाटर, मिर्च, बैंग, ककड़ी, खीरा आदि।

प्रकाश संश्लेषण में CO_2 के अपचयन के आधार पर पादपों को तीन वर्गो में विभाजित किया गया हैं –

(i) C_3 पादप –

- ऐसे पादप जिनमें केल्विन चक्र पाया जाता हैं। प्रथम स्थायी उत्पाद PGA बनता हैं एवं प्रकाश श्वसन क्रिया अधिक होती हैं।
  उदाहरण – गेहूँ, जौ, धान, सोयाबीन आदि।

(ii) C_4 पादप –

- ऐसे पादप जिनमें हेच व स्लेक चक्र पाया जाता हैं। प्रथम स्थायी उत्पाद ऑक्जेलिक अम्ल (OAA) बनाता हैं एवं प्रकाश श्वसन क्रिया नहीं होती हैं।
  उदाहरण – मक्का, ज्वार, बाजरा, गन्ना, चौलाई आदि।

(iii) CAM पादप –

- ऐसे पादप जिनमें केम चक्र पाया जाता हैं, प्रथम स्थायी उत्पाद मैलिक अम्ल बनाता हैं एवं प्रकाश श्वसन क्रिया नहीं होती हैं।
- इन पादपों में रन्ध्र दिन में बंद रहते हैं व रात्रि में खुलते हैं।
  उदाहरण – अन्नानास, ग्वारपाठा, सीसल, केक्टस आदि।

पादप हार्मोन्स

वृद्धि बढ़ाने वाले (Growth Promotors) हार्मोन्स –

- प्राकृतिक या काइटो हार्मोन्स – ऑक्जिन (IAA), साइटोकाईनिन, जिब्रेलिन
- संश्लेषित हार्मोन्स – ऑक्जिन (IBA, NAA, 2, 4-D)

(i) ऑक्जिन (Auxins) –

- ऑक्जिन नाम F.W. वेन्ट ने दिया, इसे टिस्यू कल्चर के के रूप में काम में लेते हैं।
- ये पौधे की नई पत्तियों एवं ऊपरी कलिकाओं में बनता हैं, इसलिए इसके प्रभाव को शीर्ष कालिका प्रभुत्व (Apical bud dominance) कहते हैं।
- प्राकृतिक रूप से यह सूर्य के प्रकाश में पौधों में उत्पन्न होता हैं।
- इसका मुख्य कार्य पादप कोशिका के आकार व परिमाप में वृद्धि करना हैं।

(a) प्राकृतिक ऑक्जिन्स (Natural Auxins) –

- पौधे में प्राकृतिक अवस्था में स्वतः उत्पन्न होते हैं।
- इण्डोल एसीटिक अम्ल (IAA) – यह पौधे की वृद्धि शीर्ष कलिका प्रभुत्व व पत्तियों को गिरने से रोकता हैं।

(b) अप्राकृतिक या संश्लेषित ऑक्जिन –

- इण्डोल ब्युटेरीक अम्ल (IBA) –
- यह व्यापारिक नाम 'रूटेक्स' अथवा सेरॉडेक्स के नाम से बाजार में मिलता हैं।
- प्रवर्धन में कलम से शीघ्र जड़ कूटान हेतु 1000–2500 PPM की सान्द्रता काम में लेते हैं।
- IBA विशेषतः जड़ विकसित करने का हार्मोन हैं।

नैफ्थेलिक एसिटिक अम्ल (NAA) –

- इसका व्यापारिक नाम 'प्लेनोफिक्स' हैं।
- यह कच्चे फलों को गिरने से रोकने के लिए मिर्च, टमाटर, नींबू में काम लिया जाता हैं।
- NAA विशेषतः फूल व फल से सम्बन्धित हार्मोन हैं।
- पुष्पन की क्रिया नियंत्रण करता हैं।

2, 4-D –

- यह 20 PPM से कम सान्द्रता पर हार्मोन का कार्य करता हैं तथा 20 PPM से अधिक सान्द्रता पर खरपतवार नाशी का काम करता हैं।
- 1942 में विश्व में पहला कार्बनिक खरपतवारनाशी 2, 4-D को ही खोजा गया था।
- यह पौधे में फलों को गिरने से बचाता हैं।

(ii) साइटोकाईनिन (Cytokinin) –

- यह केवल प्राकृतिक अवस्था में पौधे के अंदर ही निर्मित होता हैं।
- इसका मुख्य कार्य कोशिका विभाजन (Cell division) में सहायता करना हैं।
- यह सुसुप्ता अवस्था तोड़ने के काम भी आता हैं।
- रन्ध्रो के खुलने में सहायक हैं।
- पौधों की जीर्ण अवस्था को दूर करना (रिच मोन्ड लेगइफेक्ट)

(iii) जिब्रेलिन (Gibbrellins) –

- यह जिब्रेलिक अम्ल के रूप में उपलब्ध हैं।
- पादप कोशिका के आकार व परिमाप में वृद्धि व कोशिका विभाजन में सहायक है।
- इसका प्रयोग फलों के आकार में वृद्धि तथा अंगूर में बीजरहित (पार्थेनोकार्पी/अनिषेक फलन) में लेते हैं।
- यह भी सुसुप्ता अवस्था तोड़ने के लिए काम में लेते हैं।
- यह फलों के विरलीकरण, फलों को लगने व पुष्पन क्रिया को प्रेरित करता हैं।
- पौधों में आनुवांशिक बौनेपन को दूर करता हैं।

वृद्धि रोकने वाले (Growth retardant or inhibitors) –

- ये हार्मोन पौधे की वृद्धि को रोकते हैं।

(i) एब्सीसिक एसिड (ABA) –

- यह पौधों में सुसुप्ता अवस्था प्रेरित करता हैं तथा रन्ध्र बंद करने में सहायक हैं।
- इसे एन्टीजिब्रेलिन्स हार्मोन्स भी कहते हैं।
- यह पौधों में प्रतिकूल वातावरणीय दशाओं में पत्तियों एवं शाखाओं के बीच एब्सीसिक परत बनाकर पत्तियों को गिरा देता हैं। जिसमें प्रतिकूल वातावरणीय दशा में पौधे जीवित रह सके।
- इसे स्ट्रेस हार्मोन भी कहते हैं।

(ii) मैलिक हाइड्रेजाइक (MH) –

- यह भी पौधों की वृद्धि रोकने वाला हार्मोन हैं।
- इसे मुख्यतया भण्डारण में, प्याज व आलू के अंकुरण या फूटान रोकने के काम में लेते हैं।
- इसका व्यापारिक नाम स्प्रुट स्टोप हैं।
- तम्बाकू में सर्कस नियंत्रण में उपयोगी है।

(iii) एथिलीन (C_2H_4) –

- यह एक गैस के रूप में काम आने वाला हार्मोन हैं जिसे फलों को पकाने के काम में लेते हैं।
- इसका अशुद्ध रूप एसीटिलीन हैं जो कुछ विषैला होने के कारण सामान्यतः फलों के पकाने के काम में नहीं लिया जाता हैं।
- एथिलीन का कृत्रिम रूप – इथरेल (द्रव्य) तथा इथेपॉन (गैस के रूप में) फलों को शीघ्र पकाने के काम में लेते हैं।
- इथरेल को केला एवं खजूर पकाने के लिए काम में लेते हैं।
- जबकि इथेपॉन गन्ना एव अंगूर पकाने के लिए काम में आता हैं।

(iv) साइकोसील (CCC) –

- पौधों में पर्णीय वृद्धि को रोकता हैं व जड़ों की वृद्धि को बढ़ाता हैं। अतः शुष्क खेती में बहुत उपयोगी हैं।